अंबिकापुर। पुलिस अधीक्षक पी.के.दास को 'रक्षा-सूत्र' बांधते हुए ब्र.कु.विद्या बहन।

भिलाई। युवा कार्यक्रम का दीप प्रज्ज्वलित कर उद्घाटन करते हुए प्रदेश उपाध्यक्ष ए.बी.वी.पी के प्रशांत तिवारी, कार्मिक प्रबंधक आर.पी.बसंत कुमार, ब्र.कु.गीता बहन एवं ब्र.कु.प्राची बहन।

बुंदी, राजस्थान। विधायक अशोक डोंगरा को 'आत्म-स्मृति' का तिलक देते हुए ब्र.कु.कमला बहन।

नैंनवा, बुंदी। श्री महंत ताकेबिहारी दास जी को 'रक्षा-सूत्र' बांधते हुए ब्र.कु.कौशल्या बहन।

वरदानी भवन, इंदौर। जनमाष्टमी पर आयोजित झांकी का उद्घाटन करते हुए ब्र.कु.सुमीत्रा बहन, ब्र.कु.रीना बहन तथा अन्य।

वालाघाट। मध्यप्रदेश के जन स्वास्थ्य यांत्रिकी मंत्री गौरीशंकर बिसेन को 'रक्षा-सूत्र' बांधते हुए ब्र.कु.माधुरी बहन।

राजयोग सिखाता है श्रेष्ठ जीवन जीने की कला - ब्र.कु.मधु

राजगढ। परमात्मा से सम्बन्ध जोड़ने से हमें बुराईयों से लड़ने की शक्ति प्राप्त होती है व आत्मविश्वास बढ़ता है। राजयोग हमें विकारों और बुराईयों पर विजय प्राप्त कैसे करें इसकी समझ देता है और श्रेष्ठ जीवन जीने की कला सिखाता है।

उक्त उद्गार ब्र.कु.मधु बहन ने जिला कारागार में 'रक्षा-बंधन' के अवसर पर आयोजित कार्यक्रम में जेल के अधिकारियों और बंदियों को सम्बोधित करते हुए व्यक्त की। जेल अधीक्षक तिवारी जी ने कहा कि हमें इनके त्यागपूर्ण जीवन से प्रेरणा लेनी चाहिए, अच्छे कर्म करने की और सद्भावना से रहने की आदत डालनी चाहिए। ब्र.कु.नीलम बहन ने कैदियों को समय का महत्व बताते हुए कहा कि जिस समय मन में अच्छे संकल्प उत्पन्न हो उसे उसी समय कर लेना चाहिए और इसका दृढ़ता से पालन करना चाहिए। क्योंकि संकल्प ही हमें अच्छा या बुरा बनने की प्रेरणा देते हैं। उन्होंने सभी से बुराईयों को छोड़ने का, श्रेष्ठ जीवन जीने का और श्रेष्ठ कर्म करने की प्रतिज्ञा भी करायी। ब्र.कु.अरविंद सक्सेना ने विश्व विद्यालय का परिचय दिया और राष्ट्रीय तथा अंतर्राष्ट्रीय स्तर के होने वाले कार्यक्रमों में भी सभी को जुड़ने का आह्वान किया।

राजगढ़। जिला कारागार में कैदियों को सम्बोधित करते हुए ब्र.कु.मधु बहन।

कर्मों की गहन गति

श्रीमद्भगवद्गीता में 'ज्ञान-कर्म-संन्यास' नामक अध्याय में भगवान के ये महावाक्य हैं - ''कर्मों की गति बड़ी गहन है। विद्वान लोग भी कर्मों की गति को नहीं जानते।'' तीसरे अध्याय में ये भी कहा गया है कि कर्म ब्रह्मा से उत्पन्न हुआ और ब्रह्मा ने यज्ञ द्वारा सृष्टि आरम्भ की। इन सभी श्लोकों का भावार्थ यह निकलता है कि सतयुग के आरम्भ से पहले परमपिता परमात्मा ने प्रजापिता ब्रह्मा के द्वारा कर्म-अकर्म-विकर्म का ज्ञान दिया और कर्मों की गुह्य गति को स्पष्ट किया। परन्तु इसके साथ-साथ लोग आज भी ये एक विशेष बात नहीं जानते कि उस गहन ज्ञान में एक अति गुह्य बात क्या थी।

गीता में यह तो लिखा है कि परमात्मा ने प्रजापिता ब्रह्मा द्वारा यज्ञ की स्थापना की और उस यज्ञ के द्वारा नई सृष्टि की रचना की और यह कहा था कि तुम आसक्ति छोड़कर यज्ञार्थ कर्म करो और देवताओं की संख्या को बढ़ाओ अर्थात् मनुष्य से देवता बनाने की सेवा में तत्पर हो जाओ। उसमें यह भी कहा गया है कि यज्ञार्थ किया गया कर्म ही श्रेष्ठ कर्म है। ये सब लिखा होने के बावजूद भी लोग यह नहीं जानते कि वह यज्ञ कौन-सा था जिसकी परमात्मा ने प्रजापिता ब्रह्मा द्वारा स्थापना की थी और यज्ञार्थ सेवा करने का क्या अभिप्राय है।

इस विषय के विस्तार में स्वयं गीता में भी कई प्रकार के यज्ञ का वर्णन है और ज्ञान यज्ञ की महिमा का उल्लेख है। परमात्मा ने ज्ञान-यज्ञ की ही स्थापना की थी जिससे मनुष्य को दैवी गुण सम्पन्न बनाकर दैवी सृष्टि की स्थापना का कार्य कराया गया था। उस ज्ञान-यज्ञ में अर्थात् शिक्षा-संस्थान में जिस-जिस ने मन-वचन-कर्म से सहयोग दिया अथवा तन-मन-धन की आहुति दी और अपने जीवन को भी दिव्य बनाया वे ही श्रेष्ठ कर्म करने वाले 'ब्राह्मण' बने। उनको गति और सद्गति प्राप्त हुई। वे जन्म-जन्मांतर के लिए अथवा आधे कल्प के लिए स्वर्ग के दैवी स्वराज्य के अधिकारी बने। कर्म की इस गहनतम गति का ज्ञान आज प्राय: लुप्त हो गया है।

परमपिता परमात्मा का अवतरण धर्म की अति ग्लानि के समय होता है अर्थात् नैतिक मूल्यों या दैवी गुणों के ह्रास की सीमा पूरी होने पर होता है तभी वे प्रजापिता ब्रह्मा के द्वारा ज्ञान-यज्ञ की स्थापना करते हैं। उससे पहले या बाद में वह ईश्वरीय ज्ञान-यज्ञ होता ही नहीं। भक्ति मार्ग में भक्त लोग परमात्मा के नाम पर कुछ धन दान करते हैं, वे धार्मिक स्थानों पर तन से भी कुछ सेवा करते हैं और मन द्वारा भी भक्ति का थोड़ा-बहुत प्रचार करते हैं परन्तु न तो उन्हें परमपिता परमात्मा का स्पष्ट एवं सत्य बोध होता है और न ही तब परमात्मा द्वारा यज्ञ ही रचा गया होता है। इसलिए उन द्वारा दिया गया सहयोग केवल राजसिक स्तर का ही होता है, वह अति श्रेष्ठ तथा सात्विक कोटि का नहीं होता।

ईश्वरीय कार्य में सहयोग तथा यज्ञ-सेवा - यों परमात्मा तो 'दाता' है और सर्वशक्तिवान है। उन्हें किसी की सहायता की आवश्यकता नहीं, न ही वे अपने लिए किसी से कुछ लेते हैं क्योंकि वे परिपूर्ण हैं। परन्तु जब उनका अवतरण होता है और वे ज्ञान-यज्ञ द्वारा नई सृष्टि रचने का कार्य करते हैं तब उसके लिए योग्य व्यक्तियों और साधनों की आवश्यकता होती है। जन-जन को ईश्वरीय ज्ञान का लाभ देने के लिए तथा उन तक ईश्वरीय संदेश पहुंचाने के लिए ऐसे व्यक्तियों के निमित्त बनने की जरूरत होती है जो उस संदेश को स्वयं समझते हों और योग-युक्त एवं युक्ति-युक्त रीति से दूसरों को ईश्वरीय ज्ञान की शिक्षा दे सकते हो तब कई ऐसे व्यक्ति भी चाहिए होते हैं जो केंद्र खोलने के लिए स्थान दें, संदेश छपवाने के लिए निमित्त बनें या मेले, प्रदर्शनियां, योग-शिविर इत्यादि में तन-मन या धन से सहयोग दें। यदि किसी के तन में कुछ सेवा करने की क्षमता न हो और उसके पास सेवार्थ समय भी न हो और कुछ शिक्षा सामग्री जुटाने के लिए धन भी उसके पास न हो तब भी वह कम-से-कम मन को ईश्वरीय लगन में मगन करके तथा सकारात्मक चिंतन को अपनी जीवन प्रणाली बनाकर तो सहयोग दे ही सकता है। इस तरह के यज्ञ कार्य करने वाले के कर्म श्रेष्ठ होते हैं और वह सतयुगी श्रेष्ठ दुनिया में ऊंच पद प्राप्त करते हैं।

परमात्मा को स्वयं अपने लिए किसी चीज की आवश्यकता नहीं है क्योंकि वे तो निराकार है और आवश्यकताएं तो शरीरधारी की ही होती है परन्तु मनुष्यात्माओं की संतान के लिए सतयुगी सृष्टि की रचना करना ही परमात्मा के लिए एक आवश्यकता होती है। इस आवश्यकता को पूरा करने के लिए जो जितना न्यौछावर अथवा सहयोगी बनते हैं, वे उतना ही परमात्मा के वरदान प्राप्त करने के भागी बनते हैं। परमपिता परमात्मा ऐसी मनुष्यात्मा को न केवल अपनी ईश्वरीय सम्पत्ति का अधिकारी बनाते हैं बल्कि सतयुग में राज्यभाग्य भी देते हैं जो कि अटल, अखण्ड, निर्विघ्न और अति सुखकारी होता है। इस प्रकार कर्मों की गहन गति के विषय में यह जानना जरूरी है कि कलियुग के अंत तक का संगम समय ही ऐसा एक मात्र महत्वपूर्ण समय है जबकि मनुष्य अपना उच्चतम भाग्य बना सकता है। स्वयं परमात्मा से डायरेक्ट लेन-देन का एक यही मात्र समय होता है। इस समय थोड़ासा सुकर्म रूपी बीज बोने से अनेकानेक प्राप्तियों की फसल मिल सकती है। परमात्मा का कार्य गुप्त है और वो साधारण रूप से ही प्राय: अपना कार्य करते हैं। अत: लोग उनके साधारण रूप को न पहचानकर स्वयं भी पूर्ण ईश्वरीय सम्पत्ति से वंचित रह जाते हैं और दूसरों को भी वे ये लाभ नहीं दे पाते। कर्म-अकर्म-विकर्म की गति की बात करते हुए हमें सदा ये ध्यान रखना चाहिए कि हम उनके साथ ईश्वरीय यज्ञ में दिए जाने वाले सहयोग रूपी कर्म और उसके फल की भी चर्चा करें और स्वयं अपनी बुद्धि में इस बात को स्पष्ट करके आलस्य और बहानाबाजी छोड़कर यथा संभव रीति से उस यज्ञ के सहयोगी बनें, इसीमें ही अपने वर्तमान जग का और भविष्य में कल्याण छिपा हुआ है।